कथाकुसुमसौरभम्

॥ श्रीः ॥

द्वारकादास इण्डिक सीरीज़

४

श्रीमदम्बिकादत्तव्यासविरचितकथाकुसुममधिकृत्य

कथाकुसुमसौरभम्

लघुकथाओं द्वारा संस्कृत-शिक्षण

Sanskrit through Short Stories

नित्यानन्दमिश्रः

सरस्वती श्रुतिमहती महीयताम्

चौखम्भा कलासिका

वाराणसी (भारतवर्ष)

कथाकुसुमसौरभम्
ISBN: TPB: 978-93-91730-06-2; eBook: 978-93-91730-02-4
पृष्ठ: ८ + ३०४

प्रकाशक
चौखम्भा क्लासिका
गोकुलभवन, के. ३७/१०९, गोपाल मन्दिर लेन
वाराणसी २२१००१ (भारत)
दूरभाष: +91 542 2332637
चलभाष: +91 97185 94839
वैद्युतपत्र: ichaukhambha@gmail.com

प्रथम संस्करण: विक्रम २०७९ (सन् २०२२)
₹ ४२५/=

अन्य प्राप्ति स्थान
चौखम्भा भारती अकादमी
के. ३७/१०९, गोपाल मन्दिर लेन
वाराणसी २२१००१ (भारत)
दूरभाष: +91 542 2330349

चौखम्भा विश्वभारती
गोकुलभवन, के. ३७/१०९, गोपाल मन्दिर लेन
वाराणसी २२१००१ (भारत)
दूरभाष: +91 542 2330345

चौखम्भा बुक्स
५, यू.ए. जवाहर नगर (डाकघर के पीछे)
मलकागंज, दिल्ली ११०००७ (भारत)

मुद्रक: श्रीजी प्रिण्टर्ज़, नाटी इमली, वाराणसी

महाराजश्री स्वामी अखण्डानन्द सरस्वती को

अनुक्रमणिका

प्रस्तावना

संस्कृत भाषा के शिक्षण की दो पद्धतियाँ अत्यन्त प्राचीन काल से प्रचलित रही हैं। पहली में नियमनिर्देश करके तदनन्तर उदाहरण देते हुए निगमन किया जाता है। पाणिनि की अष्टाध्यायी तथा उसकी परम्परा में लिखित महाभाष्य, काशिका, रूपावतार, सिद्धान्तकौमुदी आदि ग्रन्थ इस प्रक्रिया का अनुसरण करते हैं। इस प्रक्रिया में भाषा के प्रायोगिक शिक्षण की अपेक्षा व्याकरण का ज्ञान अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है। भाषाशिक्षण की दूसरी पद्धति दार्ष्टान्तिक पद्धति है, जो व्यावहारिक दृष्टि से अधिक उपादेय है। इसका निहितार्थ यह है कि भाषाज्ञान के लिये दृष्टान्तस्वरूप पाठ्यसामग्री पहले तैयार की जाये और उसका बोध कराया जाये, तो भाषा हमारे वाग्व्यवहार में स्वतः अवतरित होती जाती है। मीमांसा दर्शन में अन्विताभिधानवाद के अन्तर्गत अखण्ड वाक्य से अखण्डार्थबोध को स्पष्ट करते हुए कहा गया कि वाक्यों से समग्र अर्थ का बोध हो जाने पर पद और पदार्थ का ज्ञान तत्पश्चात् स्वतः होता जाता है। पश्चिम के भाषाशास्त्रियों में नाम चाम्स्की ने भी अपने जेनेरेटिव ग्रामर के सिद्धान्त में इस तथ्य को स्वीकार किया है। यदि इस प्रणाली में एक से अधिक भाषाओं का आश्रय लिया जाये, तो मणिकाञ्चन योग हो जाता है, और इसकी उपादेयता तथा रोचकता भी तदनुसार बढ़ जाती है। शताब्दियों से संस्कृत काव्यों के टीकाकार टीकाग्रन्थों में इस प्रविधि का उपयोग करते रहे हैं। प्राकृत पद्यों को सहज बोधगम्य बनाने के लिये उनकी संस्कृत छाया की जाती है, और वे संस्कृतज्ञ समाज द्वारा आसानी से समझ लिये जाते हैं। आज भी भारतीय विश्वविद्यालयों के संस्कृत विभागों में संस्कृत का अध्यापन अन्य भाषाओं से संस्कृत में तथा संस्कृत से मातृभाषा में अनुवाद करते हुए किया जाता है, जो सर्वथा समीचीन है। पालि और प्राकृत भाषाओं का अध्यापन संस्कृत छाया की पद्धति से इन विभागों में हो रहा है, वह भी सर्वथा उचित है।

दामोदर शर्मा ने पुरानी कौशली (अवधी) के माध्यम से बोलचाल की संस्कृत सिखाने के लिये बारहवीं शताब्दी में *उक्तिव्यक्तिप्रकरण* नामक पुस्तक की रचना की। इस पुस्तक में पण्डित दामोदर ने सम्भाषण-संस्कृत सिखाने के लिये भाषाओं की पारस्परिकता के उपयोग की पद्धति अपनाई है। जिस भाषा को सिखाना है, केवल उसी में सम्भाषण व लेखन का अभ्यास कराते रहने से शिक्षार्थी भाषाओं की पारस्परिकता के द्वारा प्राप्य होने वाले वाग्वैभव से वह वंचित रह जाता है। भाषाएँ एक दूसरे को पोसती हैं। एक भाषा का ज्ञान इतर भाषा के ज्ञान को परिपूर्णता

देता है।

साहित्य के द्वारा भाषा शिक्षण एक सुपरीक्षित स्थापित प्रणाली रही है। गुरुकुल प्रणाली में सहस्रों वर्षों से हमारे देश में इस पद्धति से ही पाठ्यचर्या निर्मित की जाती रही और इस प्रणाली ने बड़े-बड़े पण्डितों को जन्म दिया। अनेक काव्य और कथाग्रन्थ भी भाषा और व्याकरण सिखाने के लिये लिखे जाते रहे हैं। इनमें महाकवि भट्टि का *भट्टिकाव्य* प्रौढ, सरस और उत्तम महाकाव्य भी है और पाणिनि व्याकरण के क्रमश: अध्ययन और बोध के लिये भी उपादेय है। इसी परम्परा में बीसवीं शताब्दी में रामशरण त्रिपाठी ने *कौमुदीकथाकल्लोलिनी* जैसे ग्रन्थ की रचना की।

बहुश्रुत शास्त्रज्ञ तथा संस्कृतशिक्षाविद् श्री नित्यानन्द मिश्र ने अपनी इस पुस्तक में संस्कृत भाषा सिखाने के लिये सहस्राब्दियों से मान्य रही इस प्रविधि का तो सटीक उपयोग किया ही है, भाषा शिक्षण के सभी उपादान अपना कर उन्होंने इस संग्रह को संस्कृत के अध्येताओं के लिये सर्वांगीणतया उपादेय बना दिया है। बहुभाषिकता का रचनात्मक उपयोग मिश्र जी ने इस पुस्तक के निर्माण में किया है। मिश्र जी इस प्रविधि का वर्षों से सफल प्रयोग करते आ रहे हैं। उनके कार्य की दुर्लभ विशेषता यह रही है कि उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी की संस्कृत जगत् की बड़ी विभूतियों के द्वारा संस्कृत शिक्षण के लिये तैयार की गईं पुस्तकों का परीक्षण करते हुए उनके संस्कृत भाषा के अध्यापन में विनियोग पर वे सार्थक विमर्श भी करते रहे हैं।

ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, महालिंग शास्त्री, विनायक पांडुरंग बोक्कील, रामकृष्ण गोपाल भंडारकर आदि पण्डितों ने संस्कृत भाषा सिखाने के लिये जिन पाठमालाओं की रचना की, उनमें से बहुसंख्य अब लुप्त हो गईं हैं। नित्यानन्द मिश्र ने संस्कृत साहित्य के भाण्डागार की विस्मृत और उपेक्षित निधियों में से एक का इस दृष्टि से पुनराविष्कार किया है, जिसके लिये वे अभिनन्दनीय हैं। कालजयी रचनाकार पण्डित अम्बिकादत्त व्यास की *कथाकुसुमम्* संवत् १९४४ में रची गई तथा इसी वर्ष खड्गविलास प्रेस बाँकीपुर से प्रकाशित हुई। अपने रचनाकाल तथा प्रकाशनवर्ष के १३५ वर्ष बाद भी यह कृति संस्कृत भाषा के शिक्षण के लिये कितनी उपादेय है, यह मिश्र जी के प्रस्तुत प्रयास से सिद्ध है।

पण्डित अम्बिकादत्त व्यास उन्नीसवीं शताब्दी के संस्कृत और हिंदी के एक मूर्धन्य कवि और गद्यकार हैं। इनका जन्म जयपुर के निकट धूलिया नामक ग्राम में एक सनातनमतावलंबी ब्राह्मण परिवार में संवत् १९१५ हुआ। इन्होने बनारस कालेज के एंग्लो संस्कृत विभाग में भी अध्ययन किया तथा पारंपरिक रीति से शास्त्राध्ययन भी किया। इनके कथाप्रवचनों से प्रभावित हो कर स्वामी विशुद्धानन्द ने इन्हें व्यास की पदवी दी। बचपन से ही ये हिंदी में आशुकाव्य रचना करते थे। बारह वर्ष की आयु में ये संस्कृत में श्लोक रचना करने लग गये थे। इन्होंने हिन्दी में ६४ तथा संस्कृत में २७ पुस्तकों की रचना की। इनमें *शिवराजविजय:* संस्कृत उपन्यास और *सामवतम्* नाटक तो संस्कृत की कालजयी रचनाओं में गणनीय हैं। इनके अतिरिक्त

संस्कृत में पण्डित व्यास जी ने अनेक ऐसी पुस्तकों का प्रणयन किया, जो या तो संस्कृत भाषा के शिक्षण अथवा संस्कृत में साहित्यरचना करने वाले नवशिक्षितों के लिये बहुत उपादेय हैं। उनकी ऐसी रचनाओं में *दु:खद्रुमकुठार:* (निबंधसंग्रह), *कथाकुसुमम्,*, *गद्यकाव्यमीमांसा, गुप्ताशुद्धिप्रदर्शनम्, पातञ्जलप्रतिबिम्ब:, प्राकृतविचित्रशब्दार्थकोष:, बालव्याकरणम्, मित्रालाप:, संस्कृताभ्यासपुस्तकम्, शिवराजविजयसंस्कृताभ्यासपुस्तकम्* तथा *पुष्पहार:* आदि उल्लेखनीय हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थ के द्वारा संस्कृतशिक्षणप्रणाली की एक परिपूर्ण रीति मिश्र जी ने अपनाई है, जो नवसुगन्ध (नौ प्रकार की टीकारूपी या अनुवादरूपी सुगन्धों, श्लेष से अन्य अर्थ नवीन सुगन्ध) से सम्पृक्त है। इन नौ प्रकारों के लिये प्रयुक्त शब्दावली में सौरभ के लिये अलग अलग नौ शब्दों में व्याख्या के भी नौ पृथक्-पृथक् शैलियों का निर्माण इस योजना में हो सका है। *आमोद* में *आ* उपसर्ग सर्वगामी प्रसार को द्योतित करता है। *आमोद:* के अन्तर्गत प्रत्येक कथा का हिन्दी में शाब्दिक अनुवाद दे कर उसकी सहज व्याप्ति सम्भव बनाई गई है। *सुवास* ऐसी सुगन्ध है जो हमारी प्रीतिकर होती है कि रम जाती है। *सुवास:* के अन्तर्गत हिन्दी गद्यानुवाद में उस कथा का सुवास बसा है। *समाकर्षी* में अंग्रेज़ी अनुवाद के द्वारा इन कथाओं के सौरभ के वैश्विक प्रसार की सम्भावना निर्मित कर दी गई है। *निर्हारी* इस सम्भावना की पुनर्व्याप्ति चरितार्थ करता है। *परिमल* शब्द तो मनोहारी सुगन्ध के लिये बहुश: प्रयुक्त होता ही है। *परिमल:* में प्रत्येक पाठ की संस्कृत टीका दे कर शिक्षार्थी के संस्कृतज्ञान का संस्कार किया गया है। *घ्राणतर्पण:* के अन्तर्गत रमणीय पद्यों में विविध छन्दों में पूरी कथा को गूँथ कर उसके साथ छन्द:शास्त्र का ज्ञान भी करा दिया गया है। *गन्धसार:* में अन्य भाषाओं के काव्यों, लोकभाषा के रोचक मुहावरों और आभाणकों को प्रकृत कथा की सम्पुष्टि में उद्धृत किया गया है। प्रश्नोत्तरों के माध्यम से पाठ का अभ्यास करा उसके संस्कार को दृढ करने के लिये *घ्राणपरीक्षा* कहा गया है। मिश्र जी ने अलग-अलग स्तर के शिक्षार्थियों के लिये इन नवविधसुगन्धों में किसका कैसे उपभोग करना है यह भी निर्देशित किया है।

भाषाशिक्षण की आधुनिक प्रणालियों में युरोकेन्द्रित विमर्श तथा औपनिवेशिक मानसिकता का अन्तर्निहित प्रभाव है, ये परम्परा तथा कालजयी साहित्य की उपेक्षा कर के आधुनिक वैज्ञानिक पद्धतियों का सहारा लेती हैं, पर ये पद्धतियाँ परम्पराबाह्य हैं और इस देश की धरती से सहज जुड़ाव स्थापित नहीं कर पा रही हैं। वे कृत्रिमता और यान्त्रिकता से बोझिल हो जाती हैं। वे भाषा के सहज प्रवाह की उपेक्षा कर के वे एक कृत्रिम भाषा का उत्पादन करती हैं फिर उसकी शिक्षा प्रदान करती हैं। इस शिक्षाप्रणाली से निकले हुए लोग एक कृत्रिम भाषा का प्रयोग करते हुए वैदेशिक दास प्रतीत होते हैं।

प्राय: इस प्रकार की पुस्तकों की सामग्री तथा नियोजन में रूढिबद्धता और जडता आ जाती है, उपदेशपरायणता के आग्रह के कारण सामग्री अनाकर्षक और नीरस हो जाया करती है। सुकवि

अम्बिकादत्त व्यास की मूल कथाएँ इन दोषों से मुक्त हैं, साथ ही नित्यानन्द जी ने नवविध सौरभ से समन्वित कर के उन्हें और सन्तर्पक बना दिया है। कथाएँ आकार में अत्यन्त लघु हैं, पर वे अपनी ध्वन्यात्मकता तथा सांकेतिकता के कारण गुणात्मक प्रभाव की लहरें रचती हैं। बालकों और प्रशिक्षुओं के मानसिक क्षितिज का इससे निश्चय ही विस्तार होगा। प्रौढ़ शिशिक्षु भी इनमें उतना ही रस ले कर संस्कृत सीख सकेंगे। उदाहरण के लिये तीसरी कथा *ग्राम्यभल्लूकौ* में भालू के चंगुल में जकड़े ग्रामीण और उसके मित्र के संवादों से पूरी कथा को जो परिप्रेक्ष्य व्यास जी ने दिया है वह उनकी कथारचनानैपुणी और वैदग्धी का प्रमाण है। रोचक संवादों के द्वारा कथाकार ने ग्रामीण की मूर्खता पर तो चुटकी ली ही है, कथा की व्याख्या की सम्भावनाएँ भी खोल दी हैं। अपने अविवेक के द्वारा किसी प्रपंच में संसक्त व्यक्ति उस प्रपंच से निकलना चाहता है, तो प्रपंच उसे अपनी गिरफ़्त से जाने नहीं देता। संसार का मायाप्रपंच भी ऐसा ही है। एक रोचक चुटकुले जैसी प्रतीत होने वाली यह कहानी अपनी ध्वन्यात्मकता में गहरे सांकेतिक अभिप्राय गुम्फित कर लेती है। इसी तरह *वृकमयूरौ* यह कथा एक आतंककारी के द्वारा सामान्य जनों के शोषण और प्रतारणा की कथा भी बन जाती है।

संस्कृत के पण्डित लोकजीवन और लोकभाषाओं में रमे रहते थे। पण्डित अम्बिकादत्त व्यास तो व्रजभाषा में अत्यन्त सरस रचनाएँ करते थे। उनके *कथाकुसुमम्* में लोकजीवन और लोकभाषाओं का सुवास भी सम्पृक्त है। संस्कृत का भारतीय भाषाओं से संवाद भी यहाँ झलकता है। नवनवतिचक्रम् बड़ी रोचक कथा है। हिन्दी आदि भाषाओं में इसी अर्थ में निन्यानबे के फेर में पड़ना यह मुहावरा बहुत प्रचलित है। पर इसके पीछे जो बड़ी रोचक कथा है, वह तो *कथाकुसुमम्* से ही विदित होती है।

भारतीय कथा परम्परा कितनी महननीय है यह भी इन कथाओं से बोध होता है। अम्बिकादत्त व्यास जी की प्रतिभा का सौरभ उनमें ऐसा समाया हुआ है, जो दिगन्त तक प्रसारित होता है। किम्बहुना—

नित्यानन्दकरः सोऽयं नित्यानन्दकृतः श्रमः।
बालानां सुखबोधाय मनोमोदाय जायताम्॥

प्रो॰ राधावल्लभ त्रिपाठी
भूतपूर्व कुलपति, राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली
भूतपूर्व संस्कृत प्राध्यापक, डॉ॰ हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर
भोपाल, ९ जुलाई २०२२

Foreword

It gives me great pleasure to write this Foreword to Shri Nityananda Misra's *Kathā-kusuma-saurabham*. For a long time, Shri Misra has been engaged in the promotion of Sanskrit education in India. A disciple of Swami Ramabhadracharya, Shri Misra has dedicated his efforts to promoting Sanskrit in many different ways. His publications are generally oriented towards making various aspects of Sanskrit accessible to a wider audience in India. I have fondly admired his Sunāma, Mahāvīrī, OM-Mālā and Vyāsa-Kathā. These books are expanding the reach of Sanskrit-based knowledge to a wider audience in India and a book like Sunāma is of immediate practical use for the parents deciding to name their newborn children.

In his new publication *Kathā-kusuma-saurabham*, Shri Misra is providing relatively easy, but authentic, Sanskrit reading materials for students of Sanskrit who have acquired some basic grammar and vocabulary and are now entering into reading Sanskrit texts. This stage of learning is very important. After gaining some elementary knowledge of Sanskrit grammar and vocabulary, students find it rather difficult to go directly into the classical Sanskrit *mahākāvyas* or dramas like *Śākuntalam*. There is a very steep learning curve in this transition.

To help students ready to begin reading Sanskrit, but reading texts that are relatively easy and yet authentic, Shri Nityananda has chosen to introduce 25 Sanskrit stories written by the famous Sanskrit author Ambikadatta Vyasa (1858–1900 A.D.). Originally it was published in 1887, and these stories were specifically intended for students of the 4th and higher standards. These were Ambikadatta Vyasa's renderings of older stories, rewritten to fit the level of beginning students. In 1889, a second edition was published that included aids

like vocabulary, notes, and versified versions of the stories in many different meters composed by Pt. Mahesh Jha.

Ambikadatta Vyasa is well-known for his Sanskrit prose Kāvya titled *Śivarājavijayam* on the life and accomplishments of the famous Maratha king Shivaji. This work, composed in perfect classical Sanskrit, is a prescribed reading in many universities in India. The same author has produced these 25 stories in Sanskrit for beginning Sanskrit, where he has used a somewhat easier and yet authentic Sanskrit style, providing an ideal stepping stone for Sanskrit students. I congratulate Shri Misra for selecting this work of Ambikadatta Vyasa for the same educational purpose.

Shri Misra's work is not a mere reprint of the 1887 edition of these stories. Here, he has provided annotated Hindi and English renderings of these stories and a commentary in Sanskrit. It incorporates Pt. Mahesh Jha's versified renderings, and for many stories, Shri Misra has composed his own renderings. The book is useful for students at various levels. The very beginning students will find the Hindi and English translations and notes useful in understanding the Sanskrit texts of the stories, while students at a higher level will find the Sanskrit commentary and the versified Sanskrit renderings useful in gaining a deeper understanding. Each original story is first presented in Sanskrit (*Kusumam*). This is followed by a word-by-word explanation in Hindi (*Āmoda*) and a Hindi translation (*Suvāsa*) and a Hindi summation of the story using a Hindi proverb. Then comes a word-by-word explanation in English (*Samākarṣī*), an English translation (*Nirhārī*), and an English summation of the story using an English proverb (*Mahakka*). This is followed by a Sanskrit commentary (*Parimala*). Then comes a Sanskrit verse summation (*Adhivāsa*), a versified Sanskrit version of the story (*Ghrāṇatarpaṇa*), and finally a full grammatical explanation of the words used in the story (*Gandhasaṃskāra*) and a few study questions for the students (*Ghrāṇaparīkṣā*). The stories are also illustrated with pictures.

Looking at all these aids provided for each story, I must say that I do not know of any other book of elementary Sanskrit readings that can

stand comparison with Shri Misra’s book. I wholeheartedly congratulate Shri Nityanand Misra for preparing this book, Chaukhambha Classica for undertaking its publication, and I recommend it to all students of Sanskrit.

Madhav M Deshpande
Professor Emeritus
Sanskrit & Linguistics
University of Michigan
Ann Arbor, Michigan, USA
12 July 2022

नान्दीवाक्

देववाङ्निष्कुटाक्रान्तं कथाकुसमसौरभम्॥

संस्कृतवाचा सह वर्तते भारतीयचेतनायाः कश्चिद् गर्भनालसम्बन्धः। भारतीयाः परस्परं येन वाक्प्रचारेण परस्परं प्रत्यभिजानन्ति तदस्ति संस्कृतम्। तत्र कारणमिदं यद् भारतीया संस्कृतिः अनयैव वाचा परिघटिता समर्धिता चास्ति। संस्कृतभाषा न केवलं स्वस्वरूपेण शताब्दीर्यावत्, अपितु स्वसन्ततिभूतभाषाणां माध्यमेन सहस्राब्दीर्यावत् भारतीयसंवेदनायाः, तन्मनीषायाश्च परिपोषणं कृतवती। भाषितभाषारूपेण संस्कृतम् सापेक्षतया अल्पीयांसं कालं, क्षोदीयश्च क्षेत्रम् अधिकृतवत्, परन्तु भारतस्य योजकभाषारूपेण पराभाषारूपेण च इदं भूयांसं कालं बंहीयः क्षेत्रं च व्याप्तवत् अधुनापि च निरन्तरं व्याप्नोति। अर्वाचीनकाले संस्कृतवाचः पुरतः स्वाभाविकैः आह्वानैः सहकृतानि नैकान्यन्यान्यपि आह्वानानि पाश्चात्त्यमतानुवर्तिनां संस्कृतिद्रुहां विविधदुष्प्रचारैरपि दृश्यन्ते। यत्र, 'संस्कृतस्य मृत्युः', 'तस्य अनुपयोगिता', 'तद्गता अनुत्पादकता', 'लोकविरोधिता', 'पश्चाद्गामिता' इत्येता नवशिक्षितेषु पाश्चात्त्यसंस्कृतेश्चाकचक्येन चकितचकितेषु प्रसभं सञ्चार्यन्ते। दौर्भाग्येण एतादृशदुष्प्रचारवशात् नैराश्यभावः केषुचिज्जागर्ति संस्कृतं प्रति।

तत्रास्माकमिदं प्रेक्षणं यत् प्रतियुगं नवीनसमस्यानुगुणम् अभिनवसमाधानानि अपि संस्कृतपक्षे समुद्भवन्ति एव। एतर्हि अपि संस्कृतस्य पक्षे नूतनानि शुभशकुनानि दृश्यन्ते। नवीनेऽस्मिन् युगे समस्यानामेतासां प्रतीकारप्रकारः प्रायः गतेषु दशकेषु समापन्नायाः संचारक्रान्तेः कारणात् सम्पद्यमान इव लक्ष्यते। संस्कृतवाङ्मयस्य अध्येतारः, विद्वांसः, नवीनसाहित्यसर्जनसक्षणाः अद्यापि भारतस्य प्रतिकोणं विद्यन्ते। पूर्वं यथा ते पारस्परिकप्रत्यभिज्ञानहीना विप्रकीर्णा दूयन्ते स्म नाद्यत्वे तथा। संचारक्रान्त्या तेषु मिथः सम्पर्कः प्रगाढीकृतः। अनया परिघटनया संस्कृतस्य विप्रकृष्टानि असंहतानि स्फुलिङ्गानि अपूर्वया कयाचिदूर्जया ज्वालीभवन्ति इव परिलक्ष्यन्ते। परिज्ञातमिदं भवति यत् संस्कृते यदपि नैराश्यमदृश्यत तत् खलु संस्कृतपरिदृश्यस्य अखण्डतया दर्शनाभावादेव आसीत्। अधुना पुनर्, वयम् अवगन्तुं पारयामो यत् संस्कृतस्य सनातनी परम्परा न केवलं पूर्णतया अक्षुण्णा तिष्ठति, अपितु भूयसीभिर्नवीनया युगानुगुणया प्रयोगसम्पत्त्या प्रतिवासरम् आढ्यीक्रियमाणापि अस्ति। साम्प्रतं वयं सुज्ञातुं प्रभवामो यत् एतर्हि संस्कृतस्य प्रातिनिध्यं न केवलं पारम्परिकाः पण्डिता वहन्ति, अपितु संस्कृतेतरविषयेभ्य आजीविकां लब्धवन्तः अगणिता जनाः संस्कृतगतां वैयक्तिकीं रुचिमनुरुध्य एतस्मिन्नुत्कृष्टां योग्यतां सम्पादयन्तो गीर्वाणवाण्याः स्वरं दशसु

दिक्षु सन्धुक्षयन्ति। एते संस्कृतमनुपजीवन्तोऽपि संस्कृतमुपजीवयन्ति। एष वर्तते संस्कृतस्य तरुणः तरुणतरश्च वंश्यः यद्वशात् संस्कृतस्य युगीना क्रान्तिर्विलसति।

संस्कृतमधिकृत्य नैराश्यं प्रसारयन्तो वहन्तो वा जनाः समाजे नैकविधा लक्ष्यन्ते। प्रथमं तावत् ते ये संस्कृतम् अज्ञात्वैव ईर्ष्याकषायितास्तत्प्रतीपतया घटन्ते। वस्तुतः भारतं वैविध्यपूर्णम्। अत्र जनानां भेदकानि तत्त्वानि सुबहूनि, योजकानि च तत्त्वानि अल्पीयांसि। तत्र आस्माकीना संस्कृतिः, आस्माकी राष्ट्रियता इत्यादीनि कानिचन सूत्राणि सन्ति यानि अस्मासु एकत्वस्य भानं निरन्तरं कारयन्ति। संस्कृतमपि भारतस्य एकीकरणौपयिकेषु सूत्रेषु अन्यतमम्। अतः संस्कृतद्वेषो भारतद्वेषस्य प्रायः पर्यायभूतः वर्तते। परन्तु न सर्वे संस्कृतद्रुहो भारतद्रुहः। केचन मूर्खतावशादपि एतदाचरन्तो दृश्यन्ते। संस्कृतं प्रति नैराश्यं भजमाना अन्ये जनास्ते ये विदेशे स्वदेशे वा स्थित्वा औपनिवेशिकप्रभुभिः संप्रसारितेन इन्द्रजालेन ग्रसितचेतसो विद्यन्ते स्वयं वा औपनिवेशिक-मनोवृत्तिमन्तो भवन्ति। एते भारतीयचैतन्यस्य पुनरुत्थानस्य सम्भावनामपि निराकुर्वन्ति । नवीन-भारते ते संस्कृतस्य समुन्मीलनेन यत् प्रव्यथितास्तत्र कारणमिदं यद् एषा परिघटना तेषां कृत्रिमां श्रेष्ठतां विरुणद्धि, तां प्रसभं खण्डयति च। तृतीयप्रकारका जनास् स्वयं संस्कृतस्य पुरातनाः वंश्याः सन्ति। तेषां नैराश्यं सहानुभूतिजनितम् अतः सकारात्मकमस्ति। तैः विद्यावयोवृद्धैः तत् सांस्कृतं वैभवं दृष्टं यदा प्रायः प्रतिग्रामं संस्कृतपाठशाला अवर्तन्त। विश्वत्र संस्कृतस्य महान्तः पण्डिता दृश्यन्ते स्म। संस्कृतं दिव्यवस्तुवत् सर्वत्र सम्मान्यमासीत्। आङ्ग्लाधिपत्यस्य षड्यन्त्रैः विशीर्यन्ती सहस्राब्दप्राचीना संस्कृतशिक्षाव्यवस्था स्वतन्त्रतानन्तरम् आगतस्य प्रशासनस्य दुर्नयानां कारणात् तेषामक्ष्णोरेव प्रायः ध्वंसं प्राप्तवती। एतत् सर्वं पश्यतां तेषां दुःखं नैराश्यं च नितरां स्वाभाविके एव। नैराश्यस्य वाहकानां प्रथमद्वितीयप्रकारकाणां (ये ईर्ष्यालवः षड्यन्त्रकारिणश्च भवन्ति) समुपचारः क्रमशो भवति—उपेक्षा प्रबलतर्कैश्च तेषां खण्डनम्। तृतीयप्रकारका अपि जना उपर्युक्तप्रकारकसंस्कृतक्रान्त्या अधुनावगन्तुं कल्पन्ते यत् अर्वाचीनेऽस्मिन् काले संस्कृताध्ययनस्य लोकतान्त्रिकीकरणं, सार्वजनिकीकरणं च भवतः। एतर्हि संस्कृतं न केवलम् अद्भुतं पारलौकिकं वा वस्तु, अपितु नितान्तं सुलभतया सर्वेषां पुरतः समुपतिष्ठन्ती काचित् सम्पत्तिः। किञ्च, संस्कृतस्य प्राक्तनी शिक्षाप्रणाली प्रायेण प्राचीनां पृथग्विधाम् च आर्थिकीं व्यवस्थामुपजीवति स्म। वृत्तायां प्राचीनायाम् अर्थव्यवस्थायां संस्कृतशिक्षणस्य तादृशी प्रणाली यदि मन्दतामिता तर्हि न वर्ततेऽत्र आश्चर्यभूयस्त्वम्। परन्तु शिक्षणप्रकारस्य तनूभवनस्य तात्पर्यम् विद्याया समाप्तिर्नास्ति। भारतीय-ज्ञानपरम्परा तस्या वाहिका संस्कृतभाषा तु भारतीयानां चेतनायाः पर्यायभूतास्ति। यदापि भारतीया आत्मनः प्रति सचेतस्का भवन्ति तदा नूनमेव संस्कृतं परामृशन्ति, फलतः तस्य विकासोऽपि अवश्यं भवत्येव। यदि पुरातनीभी रीतिभिर्न भवति तदा एतदर्थं नवा मार्गा समुपकल्प्यन्ते। प्रकृते युगे संचारक्रान्तिवशात् एवंविधा बहवः पन्थानः समुद्घाटिताः येन बहवः संस्कृतेतरजना अपि अनेन आत्मनो योजयितुं समर्था भवन्ति। किं बहुना, संस्कृतस्य पारम्परिकी शिक्षापद्धतिरपि अनेन नवीनेन

उद्विकासेन परिपोषिता भवति।

संस्कृतस्यैष युवा युवतरश्च वंश्य: अनेकधा प्राक्तनवंश्यात् समर्थतरो भवति। सत्यमिदं यत् प्राक्तनेषु कालेषु याऽस्माकं महनीया पण्डितपरम्परा सा गभीरज्ञानकारणात् निष्प्रतियोगिनी अस्ति तथापि अद्यतनस्य नवीनवंश्यस्य ज्ञानप्रकार: बहुश: सविस्तरतर: उपयोगयोग्यतरश्चास्ति। नवीनानां प्रविधीनां प्रयोगवशात् ते दक्षतरा: वर्तमानजनताभिश्च प्राप्यतरा: सन्ति। सामाजिक-माध्यमैश्च एते अतिमात्रं सन्निकृष्टा अपि सन्ति। भूयस्सु एतादृशेषु नवपण्डितेषु अर्हति अस्मन्मित्रं **नित्यानन्दमिश्र:** अग्रपङ्क्तिम्। न केवलमेतस्मिन् विराजते प्रखरं पाण्डित्यम् अपितु तस्य पाण्डित्यस्य जनोपयोगयोग्यं प्रचुरप्रचारसामर्थ्यमपि। कालिदासोक्तसुशिक्षकवदेतस्मिन् अधिकरणे न केवलं *आत्मसंस्था श्लिष्टा क्रिया* अपितु वर्तते *विशेषयुक्ता संक्रान्ति*रपि। आधुनिकज्ञान-प्रणालीसु नितरामधीती अयम् विद्वान् विविधसामाजिकमाध्यमानि संस्कृतकार्यार्थम् उपयुज्य क्रियावान् सन् यावता भूयसीं जनताम् उपकुरुते तावता प्रायो न कश्चिदपि कुर्वन् दृश्यते। संस्कृतं पुङ्खानुपुङ्खं ज्ञात्वैव नास्य धीमत: सन्तोष: अपितु एतस्य ज्ञानस्योपयोगोऽनेन संस्कृति-संवर्धानाय, धर्मध्वजोत्तोलनाय, विज्ञानवैशद्याय, भ्रान्तिभ्रंशाय च प्रभावशालितया कृत:, क्रियते च अविच्छेदेन। *सुनाम*-नाम्न: पुस्तकस्य रचनमेनेन ममैतद् वचनम् उपोद्बलयति यन्माध्यमेन समाजे विश्वत्र प्रसरन्ती दुर्नामकरणस्य सद्यस्का अपसंस्कृति: न केवलं निवार्यते अपितु तां समीकर्तुं सुन्दराणि नामानि अपि पुरस्क्रियन्ते। वचने रचने च सर्वत्र मिश्रवर्यस्य संस्कृतप्राकृतयो: य: प्रयोगाग्रह: स नूनमेव निजभाषारक्षणानुरोधित्वात् नितरां सत्कारार्ह:। अनेन अनेकान्यन्यानि पुस्तकानि जनमनोहारीणि अपरयापि वाचा रचितानि, अथ च स्वयमपि **निरामया**भिधं प्रकाशन-संस्थानं समुद्घाट्य महत्त्वाधायीनि पुस्तकानि प्रकाशमानीतानि।

एतस्यैवेषा नूत्ना प्रकाश्या कृति: **कथाकुसुमसौरभम्** अस्माभि: स्वागतवचोभि: पुरस्क्रियते। नैकधा स्तुतिमर्हति एषा कृति:। यथा, पण्डितप्रवरस्य श्रीमदम्बिकादत्तव्यासस्य पुस्तकोप-बृंहणरूपा सती एषा गोत्रसंवर्धकत्वे पारम्परिकत्वेन च स्तूयते, विविधव्याख्याभि: संवलिता सती परिपूर्णाङ्गत्वाद् वन्द्यते, त्रिभाषाभूषिता सती भूयसां जनानां समुपकारकत्वेन पनाय्यते। वयं तु एतां कृतिम् अस्मत्पूर्वपुरुषै: नैकसहस्राब्दानुवर्तिनां संस्कृतशिक्षणप्रविधिमार्गणप्रयासानाम् मध्ये नूतनतमां भावयित्वा स्वागतवचांसि व्याहराम:। कीदृशोऽयं चिरन्तनप्रयासो भारतीयानां संस्कृतसुरक्षार्थमति किञ्चिदेवाग्रे पश्याम:।

यथा उपक्रम एव उक्तं, भारतस्य बृहत्तरभारतस्य वा आत्मपरिज्ञानाय संस्कृतमतीव नान्तरीयकं। एतस्मादेव कारणात् लोकभाषारूपेण असदपि संस्कृतं भारते सर्वदा वर्तते, भारतीयैश्च सर्वथा सुरक्ष्यते। एतस्य हानि: समस्तस्यापि संस्कृत्याधारस्य हानिरिति निश्चप्रचं सहस्राब्देभ्योऽ-स्माकं पूर्वपुरुषै: सुज्ञातम्। अत एव तै: संस्कृतस्य यथाकथंचिदपि सुरक्षार्थं निरन्तरं प्रयतितम्। एतदेव कारणं यत् संस्कृतशिक्षणार्थं विविधप्रविधीनाम् अन्वेषणं पाणिनेरनन्तरमपि संस्कृत-

व्याकरणमाध्यमेन, प्राकृतभाषिकबालावबोधानाम् माध्यमेन निरन्तरं प्रावर्तत एव। एषा प्रवृत्तिस्तथा प्रगाढाऽस्ति यथा भारतस्य सार्धद्विसहस्रवर्षाणां बौद्धिकम् ऐतिह्यम् प्रकारान्तरेण "संस्कृतस्य शिक्षणार्थम् अन्विष्यमाणानां प्रविधीनाम् ऐतिह्यम्" इति कृत्वाऽपि द्रष्टुं शक्यते।

भारते संस्कृतस्य विविधक्षेत्रीयाणां प्राकृतभाषाणां च परम्परा मिथः सहकारेण विकासं विस्तारं चालभत। लोकभाषारूपाद् विचलितायां, प्राचीनतां च गतायां संस्कृतवाचि नवनवतया समुदितानां विकासमीयुषीणां च क्षेत्रीयभाषाणाम् अधिभारः सदैवानुभूयत एव स्म। यथाह भगवान् भाष्यकारः *भूयांसोऽपशब्दा अल्पीयांसः शब्दाः* इति। एतस्मात् कारणात् प्रतियुगं संस्कृतस्य शिक्षणं प्रति प्रतिनवानि आह्वानानि प्रदर्शयति। अत एव खलु सत्यपि सर्वाङ्गपूर्णे पाणिनीयतन्त्रे, सरलतरं भोजराजीयं हैमं वा पदशास्त्रं समुदेति, संक्षिप्ततरं कातन्त्रं सारस्वतं वा समुदेति। सत्स्वपि च तेषु पूर्वेषु सर्वेषु लोकभाषाभिः बालावबोधा विरच्यन्ते, सम्भाषणप्रयोगौपयिका ग्रन्था वा ग्रथ्यन्ते। परिवर्तमानयुगानुगुणं परिवर्तमानजनमनोवृत्तीरभिलक्ष्य अभिषेणयताम् आह्वानानाम् प्रतिवचनं प्रदातुं विद्वांसः सदैव सज्जा अतिष्ठन्। अतीवोचितमिदं *श्रुतं मे गोपाय* इति श्रुतिवाक्यान्यनुसरताम् अस्माकं पूर्वपुरुषाणां विपश्चिताम्।

अत्र इदं ध्यातव्यमस्माभिः सर्वैरपि—साम्प्रतिके काले संस्कृतसुरक्षार्थं यानि आह्वानानि सन्ति तानि पूर्वभ्यो युगेभ्यः कठोरतराणि जायामानानि सन्तीति निश्चप्रचम्। तत्र भवन्ति भूयांसि कारणानि। तत्रापि भवत्ययं विशेषः—देशोऽयमस्माकं जगतः नैकदेशा इव उपनिवेशकालस्य अन्धकारमयीं काराम् उत्तीर्य समागतो कश्चन नवीनो राष्ट्रः, यः औपनिवेशिकताया अनन्तरभाविन्या युरोपीय-करणस्य प्रक्रियया धृतराष्ट्रशक्त्या भीम इव निर्दयं, प्रगाढं, निष्ठुरं च परिष्वक्त आस्ते। एषा प्रक्रिया देशजभाषासु संस्कृतिषु च साक्षाद् आक्रामति। ताः प्रति उपनिविष्टजनताया मनस्सु काञ्चिद् हीनभावनां प्रपूरयति। संस्कृतं यतः भारतदेशजानां सर्वासां संस्कृतीनां सुरक्षिका तत्तद्देशज-भाषाणां च स्वास्थ्याय प्रतिभूतिः, अत एव सैव पाश्चात्त्यशरारूणां प्रधानशरव्यभूता दृश्यते। तां प्रति औपनिवेशिकप्रभुभिरुपदिष्टा भारते सर्वतः प्रसृता हीनभावना तस्याः शिक्षणं कठिनीकरोति। अग्रे इदमेकमुदाहरणम्—अद्यत्वे भारतीयभाषासु अवाञ्छिततया परिवर्धमानानाम् आङ्ग्लशब्दानां कारणवशात् गृहेषु बालाः तत्समतद्भवादिशब्दार्थाभ्यां मातुः स्तनाभ्याम् इव एकपदे दूरीक्रियन्ते। ततः किम् भवति? संस्कृताध्यापनकाले तेषां तेषां तत्समशब्दानां शिक्षणमपि नवीनकर्तव्यतया आपतति अस्मत्पुरतः, ये पूर्वं हिन्द्यादिलोकभाषासु स्थिरपदतया, प्रचुरप्रचारतया च सहजं सुलभा अवर्तन्त। इदं केवलमेकमुदाहरणं भूयसां मध्यात्। अत एव एतस्मिन् काले पूर्वतोऽप्यधिकं जागरूकतया विविच्यास्माभिः संस्कृतशिक्षणप्रविधयः अन्वेष्टव्याः, प्रयोक्तव्याः, प्रसारयितव्याः, येन संस्कृतविद्या सुरक्षिता वीर्यवती च स्यात्।

मिश्रवर्यस्यैष यत्नः पूर्वोक्ताया एव चिरन्तन्याः संस्कृतसुरक्षणप्रवृत्तेर्युगानुकूलमनुसरणम्, अतो नितान्तमेव स्वागतमर्हति। किञ्च, एतत्कृतिगत-**परिमल**-माध्यमेन नित्यानन्दो मिश्रः संस्कृत-

व्याख्यानपरम्परायां नवीनं कञ्चिद् योगं कुर्वन्निव भाति। वयमाशास्महे यत् भविष्यति अनेन इतरेऽपि ग्रन्था व्याख्यास्यन्त संस्कृतपाण्डित्यपरम्परा च समर्धयिष्यत इति। कतीनांचन सुन्दर-पद्यानां करणेन कवित्वमप्यस्य स्फुटीभवति, विद्वत्त्वकवित्वयोः सुवर्णसौरभसंयोगो येनास्मिन् लक्ष्यते। **गन्धसार-महक्क-अधिवास**वर्गाः पुनः विविधवाङ्मयैः सहास्य परिचयं पिशुनयन्तः एतस्य रासिक्याधिक्यं ख्यापयन्ति। यथा *कथाच्छलेन बालानां नीतिस्तदिह कथ्यते* इति प्रतिज्ञामादाय हितोपदेशः प्रवृत्तः प्रथितश्च च तथैव कथामिषेण सर्वेषां संस्कृतज्ञानदायकत्वेन **कथाकुसुमसौरभम्** अपि प्रवर्तते। सौरभमस्याः कृतेः सकललोकमनोहारितया, सर्वजनभोग्यतया च सर्वत्र प्रथतामिति भगवतीं सरस्वतीं संप्रार्थ्य वयं प्रसीदामः।

संस्कृतशिक्षणसारैर्विविधवचोभिश्च परिमलोद्गारैः।
आनन्दयतु समन्तान्नित्यानन्दः सुधीः सर्वान्॥

इति निवेदयति

बलरामशुक्लः
प्राध्यापकः, संस्कृतविभागः, देहलीविश्वविद्यालयः
श्रावणशुक्लतृतीया, सं॰ २०७९

पुरोवाक्

हिन्दी

प्रिय पाठकों।

प्रारम्भिक संस्कृत सीखने के लिए कौनसी पुस्तक पढ़ी जाए, मुझसे यह प्रश्न अनेक बार पूछा जाता है। इसी प्रश्न के उत्तर के रूप में यह पुस्तक लिखी गई है। मैं बहुधा हिन्दी के माध्यम से संस्कृत सीखने वालों को पं॰ श्रीपाद दामोदर सातवळेकर की **संस्कृत स्वयं शिक्षक** और पं॰ चक्रधर नौटियाल हंस की **नवीन अनुवाद चन्द्रिका** पढ़ने का और इसी प्रकार अंग्रेज़ी के माध्यम से संस्कृत सीखने वालों को पं॰ वामन शिवराम आप्टे की The Student's Guide to Sanskrit Composition: Being a Treatise on Sanskrit Syntax पढ़ने का सुझाव देता हूँ। ये सभी श्रेष्ठ पुस्तकें अन्य अनेक प्रारम्भिक संस्कृत की पुस्तकों की भाँति सैद्धान्तिक पद्धति पर आधारित हैं—अनेक विषयों को सिद्धान्तों के रूप में सिखाया गया है और सीख को उदाहरणों के माध्यम से सुदृढ किया गया है। इसके विपरीत प्रस्तुत पुस्तक में प्रायोगिक सरणि का अनुसरण किया गया है—संस्कृत को पण्डित अम्बिकादत्त व्यास की लघु कथाओं के माध्यम से सिखाया गया है और सीख को सिद्धान्तों के माध्यम से सुदृढ किया गया है।

अभिनवबाण पं॰ अम्बिकादत्त व्यास (सं॰ १९१५–१९५७, ई॰ १८५८–१९००) एक अप्रतिम बहुशास्त्रविद्, काव्यकार और नाटककार थे। उन्होंने सं॰ १९४४ (ई॰ १८८७) में चौथी और उससे ऊपर की कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिए व्यावहारिक संस्कृत की एक सरल पुस्तक उपलब्ध कराने के उद्देश्य से पच्चीस कथाओं के संग्रह **कथाकुसुमम्** ("कथाओं का फूल") की रचना की थी। इस संग्रह में अनेक, संभवतः सभी, कथाएँ उनकी मूल रचनाएँ नहीं थी अपितु पुरानी कथाओं अथवा नीतिकथाओं का अनुवाद थीं। तथापि व्यास महाभाग की सरल होते हुए भी काव्यात्मक और सुन्दर भाषा ने इस पुस्तक को अमर बना दिया। सं॰ १९४६ (ई॰ १८८९) में इस पुस्तक का सरल शब्दावली, पादटिप्पणियों, कथाओं के अन्त में अनुष्टुप् छन्द में (श्लोकपाद, श्लोकार्ध, श्लोक अथवा एकाधिक श्लोकों में) निबद्ध सीखों, और दीर्घतर छन्दों में पं॰ महेश शर्मा झा कृत काव्यात्मक सारांशों सहित दूसरा संस्करण प्रकाशित हुआ था। मैंने निजी रूप से और अपनी यूट्यूब सरणि पर *समारम्भ* शृङ्खला में भी छात्रों को संस्कृत सिखाने के लिए **कथाकुसुमम्** का प्रयोग किया है।

कथाकुसुमसौरभम् ("कथाओं के फूल की सुगन्ध") नामक इस पुस्तक में **कथाकुसुमम्** की पच्चीस कथाएँ नौ नव सुगन्धों के साथ प्रस्तुत हैं। *आमोदः* ("एक दूरगामी सुगन्ध") में प्रत्येक कथा का शब्दशः हिन्दी अनुवाद है, तो *सुवासः* ("सुन्दर सुगन्ध") में हिन्दी गद्यानुवाद। *गन्धसारः* ("सुगन्ध का सार", और चन्दन का एक पर्यायवाची शब्द) में कथा का सार एक हिन्दी छन्द, मुहावरे अथवा कहावत में प्रस्तुत है। *समाकर्षी* ("दूरगामी सुगन्ध") में कथा का शब्दशः अंग्रेज़ी अनुवाद है और *निर्हारी* (इसका भी अर्थ "एक दूरगामी सुगन्ध" है) में अंग्रेज़ी गद्यानुवाद। *महक्कः* (यह भी "दूरगामी सुगन्ध" का पर्याय है) में एक अंग्रेज़ी कहावत अथवा सूक्ति में कथा का सार है। *परिमलः* ("एक मनोहारी सुगन्ध") में कथा पर संस्कृत टीका है। प्राचीन संस्कृत टीकाओं की शैली में लिखी गई विविध कोशों और व्याकरण ग्रन्थों के उद्धरणों से विभूषित यह *परिमलः* टीका मूल कथाओं का युक्ततम अनुवाद है। इस टीका का उद्देश्य है प्रौढ ग्रन्थों पर संस्कृत टीकाएँ पढ़ने के लिए छात्रों को सक्षम बनाना। *अधिवासः* ("अधिक सुगन्ध", और सुगन्धित करने की प्रक्रिया) में कथा का सार एक संस्कृत सुभाषित के माध्यम से बताया गया है। *घ्राणतर्पणः* ("नासिका को तृप्त करने वाली सुगन्ध") में पण्डित महेश शर्मा झा कृत कथा का पद्यमय सार है। नौ में से आठ सुगन्ध मेरी कृतियाँ हैं और यह चरम सुगन्ध पण्डित महेश झा की। इन नवसुगन्धों के अतिरिक्त प्रत्येक कथा रूप अध्याय में पाठकों को कथा से उदाहृत एक शब्द और एक धातु के सुबन्त-रूप (शब्दरूप) और तिङन्त-रूप (धातुरूप) का अभ्यास कराने वाला *गन्धसंस्कारः* ("सुगन्धों की शिक्षा") भाग है और उनके ज्ञान के परीक्षण हेतु *घ्राणपरीक्षा* ("सुगन्ध पहचानने की परीक्षा") भाग भी है। इस भाग में प्रश्नों के उत्तर के लिए पाठकों को *परिमलः* टीका का अध्ययन करना होगा।

हिन्दी अथवा अंग्रेज़ी माध्यम से संस्कृत सीखने वाले पाठकों के लिए पहले मूल संस्कृत कथा का पाठ, फिर हिन्दी अथवा अंग्रेज़ी शब्दशः अनुवाद का अध्ययन, तदनन्तर हिन्दी अथवा अंग्रेज़ी अनुवाद का अध्ययन और अन्ततः संस्कृत टीका का अध्ययन श्रेयस्कर होगा। यद्यपि यह सम्भव है प्रारम्भिक छात्रों को पूरी संस्कृत टीका समझ न आए, तथापि उनके लिए जितना हो सके उतना समझने का प्रयास करना महत्त्वपूर्ण है। जिन पाठकों को पहले संस्कृत सीखने का अनुभव है, वे हिन्दी और अंग्रेज़ी अनुवादों को छोड़कर सीधा संस्कृत टीका पढ़ सकते हैं।

इस पुस्तक को प्रकाशित करने के लिए मैं चौखम्भा क्लासिका के श्रीयुत श्रेयस् गुप्त जी का बहुत आभारी हूँ। भारत के प्राचीनतम और प्रशस्ततम प्रकाशन संस्थानों में से एक चौखम्भा से जुड़कर मैं गौरव का अनुभव कर रहा हूँ। पाणिनीय व्याकरण में पारङ्गत श्रीमान् उज्जवल राजपूत ने संस्कृत टीका का प्राग्रूप-संशोधन करके कई सुधार किए हैं। उनके इस सारस्वत उपकार के लिए मैं उनका अधमर्ण हूँ। मैं ऋणी हूँ बाल-विदुषी और बहुमुखी प्रतिभा से सम्पन्न सुश्री दीक्षा जय त्यागी का जिन्होंने इस पुस्तक के पच्चीस चित्र बनाए हैं। विदुषी-चित्रकर्त्री शिवानी अत्रि ने

इस पुस्तक का आवरण चित्र बनाया है, जिसके लिए में उनका कृतज्ञ हूँ। मैं अपने पुत्री-पुत्र और माता-पिता को हृदय से धन्यवाद देता हूँ। आपके प्रेम और समर्थन से ही मेरा लेखन सम्भव है। अन्ततोगत्वा इस पुस्तक के लेखन में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से योगदान देने वाले सभी महानुभावों को भी मैं धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ।

यह पुस्तक संस्कृत सीखने की प्रारम्भिक साधना में उपयोगी सिद्ध हो इस आशा सहित,

नित्यानन्द मिश्र
मुम्बई, योगिनी एकादशी, विक्रम २०७९

English

Dear readers,

This book has been written in response to numerous requests for suggesting good books to learn introductory Sanskrit. I often recommend the “Saṃskṛta Svayaṃ Śikṣaka” by Shripad Damodar Satvalekar and “Navīna Anuvāda Candrikā” by Chakradhar Nautiyal Hans for readers wishing to learn Sanskrit through Hindi and “The Student’s Guide to Sanskrit Composition: Being a Treatise on Sanskrit Syntax” by Vaman Shivram Apte for readers wishing to learn Sanskrit through English. These excellent books, like many other great books for introductory Sanskrit, take the theoretical approach—many different topics are taught as theory and the learning is supplemented with practical examples. This book, in contrast, takes the practical approach—Sanskrit is taught by the means of short stories of Pandit Ambikādatta Vyāsa and the learning is supplemented with theory.

Pandit Ambikādatta Vyāsa (1858–1900), often referred to as *Abhinava-Bāṇa* (“the modern Bāṇabhaṭṭa”), was a polymath and poet-dramatist par excellence. He wrote the **Kathā-kusumam** (“the flower of stories”, or “the story-flower”), a collection of twenty-five short stories, in 1887 with the aim of providing “an easy reader in idiomatic Sanskrit” for young children of class four and above. Many, if not all, of the stories were not his original creations but retellings of older fables or stories. Nevertheless, the simple and yet poetic and exquisite language of Vyāsa made this work a classic. A second edition of the book was printed in 1889, with simplified diction, footnotes, illustrations, a short summary in the *anuṣṭup* metre (in a quarter verse, a half verse, or one or more verses) at the end of each story, and versified summaries in longer poetic metres by Pandit Maheśa Śarmā Jhā. I have personally used the **Kathā-kusumam** to teach Sanskrit to several students personally and also on my YouTube channel in the *Samārambha* series.

This book, the **Kathā-kusuma-saurabham** (“the fragrance of the flower of stories”), presents the twenty-five stories in the **Kathā-kusumam** with nine

new fragrances. The *Āmodaḥ* ("a very far-reaching fragrance") fragrance offers word-for-word Hindi translation of the story, while the *Suvāsaḥ* ("an agreeable fragrance") fragrance presents the Hindi prose translation. The *Gandhasāraḥ* ("the essence of a perfume", also a word for sandalwood) fragrance presents the essence of the story through a popular Hindi verse, aphorism or proverb. The *Samākarṣī* ("a far-spreading fragrance") fragrance offers word-for-word English translation while the the *Nirhārī* (also "a diffusive fragrance") fragrance has the English prose translation. The *Mahakkaḥ* (also "a wide-spreading fragrance") fragrance presents the essence of the story as an English proverb or aphorism. The *Parimalaḥ* ("an enchanting fragrance") fragrance is the Sanskrit commentary on the story. Written in the style of ancient Sanskrit commentaries with citations from various lexicons and grammar works, it is the most accurate explanation of the stories and is aimed at preparing learners for reading Sanskrit commentaries on advanced works. The *Adhivāsaḥ* ("a superior fragrance", also a word for application of perfumes) presents the essence of the story using a Sanskrit quote or *subhāṣita*. The *Ghrāṇatarpaṇaḥ* ("a nose-satisfying fragrance") has versified summary of the story by Pandit Maheśa Jhā. Eight fragrances are my work while the last one is that of Pandit Maheśa Jhā. In addition to the the nine fragrances, each chapter also has a *Gandhasaṃskāraḥ* ("education of fragrances") section, which introduces the reader to inflections and conjugations of an example word and an example root from the story, and a *Ghrāṇaparīkṣā* ("the smelling test") section, which has exercises that test the reader's understanding. Answering the questions in the exercises will require the readers to peruse the *Parimalaḥ* commentary.

The recommended approach for readers learning through Hindi or English is to first read the original story in Sanskrit, then the word-for-word translation, then prose translation into Hindi or English and finally the Sanskrit commentary. While beginners may not grasp the Sanskrit commentary in its entirety, it is important for them to try to understand as much as possible. Readers who have previously learned Sanskrit may skip the Hindi and English translations and go straight to the Sanskrit commentary.

I offer my thanks to Sh. Shreyas Gupta of Chaukhambha Classica, Varanasi, for publishing this book. It is an honour for me to be associated with one of the oldest and most reputed publication houses of Bhārata. Sh. Ujjval Rajput, a remarkable scholar of Pāṇinian grammar, has proofread the Sanskrit commentary and made several corrections. I offer my fervent thanks to him. I am indebted to Sushri Deeksha Jay Tyagi, a child prodigy and upcoming scholar, for her twenty-five sketches that have been used in this book. Vidushi Shivani Attri has painted the cover of the book for which I cannot thank her enough. I offer my deepest gratitude to my children and parents whose love and support make my writing possible. Finally, thanks are due to all others who have directly or indirectly assisted me in completing this book.

With the hope that this book will be useful in the initial stages of your Sanskrit learning journey,

Nityānanda Miśra

Mumbai, 24 June 2022

गीर्वाणवाण्याम्

गणेशं शारदां शम्भुं सीतां रामं कपिं गुरुम्।
मातरं पितरं देवानाचार्यान् सादरं स्तुवे॥
व्यासोपाख्याम्बिकादत्तं कथाकुसुममालिनम्।
नामं नामं तनोम्येतत्कथाकुसुमसौरभम्॥
कथापुष्पस्य ग्रन्थेऽस्मिन्नम्बिकादत्तबुद्धिना।
सौरभस्य कृतो व्यासः कथाकुसुमसौरभे॥
नव गन्धा विराजन्ते नव्येऽस्मिन् पुस्तके नवाः।
तेषां राराज्यते राजा गन्धः परिमलो महान्॥
देववाणीमहाराममकरन्दं पिपासवः।
गुञ्जन्तु सौरभं घ्रात्वा च्छात्रनव्यालयः कलम्॥

अयि प्रियपाठकाः,

अनेके संस्कृतभाषामधिजिगमिषवः "संस्कृताध्ययनं कथं प्रारभेमहि" इति प्रश्नं मां पृच्छन्ति। तेषां प्रश्नानामुत्तरीभूतमेवेदं पुस्तकम्। हिन्द्याऽधीयानेभ्यश्छात्रेभ्यः सातवळेकरोपाख्यस्य श्रीपाद-दामोदरमहाभागस्य **संस्कृत स्वयं शिक्षक** इति पुस्तकं हंसापरनामधेयस्य नौटियालोपाख्यस्य चक्रधरमहोदयस्य **नवीन अनुवाद चन्द्रिका** इति पुस्तकं च, आङ्ग्ल्याऽधीयानेभ्यश्छात्रेभ्य आपटे-इत्युपाख्यस्य वामनशिवरामस्य The Student's Guide to Sanskrit Composition: Being a Treatise on Sanskrit Syntax चेति पुस्तकमहं प्रायेणोपदिशामि। एतानि प्रशस्तानि पुस्तकानीतराणि बहूनि प्रारम्भिकसंस्कृतपुस्तकानीव सिद्धान्तरीतिमनुसरन्ति। एतादृशेषु पुस्तकेष्वनेके विषयाः सिद्धान्तरूपेण शिक्षिताः शिक्षा चोदाहरणैर्दृढीकृता। तद्विपरीता प्रायोगिकरीतिरस्मिन् पुस्तकेऽनुस्रियते, यस्यां पण्डिताम्बिकादत्तव्यासस्य लघुकथाभिः संस्कृतभाषा शिक्ष्यते शिक्षा च सिद्धान्तैर्दृढी क्रियते।

अभिनवबाण इति ख्यातः कविताकामिनीविलासः समेधितविद्वज्जनहृदयोल्लासः श्रीमदम्बिकादत्तव्यासः (सं॰ १९१५–१९५७) एकोऽप्रतिमो बहुशास्त्रवित्काव्यकृन्नाटककृच्चासीत्। स वैक्रमे १९४४तमेऽब्दे चतुर्थश्रेण्या ज्यायःश्रेणीनाञ्च विद्यार्थिभ्यो व्यावहारिकसंस्कृतशिक्षणार्थं सरलं पुस्तकमेकं प्रदित्सुः **कथाकुसुमम्** इति पञ्चविंशत्कथासङ्ग्रहात्मकं लघुकलेवरं सदपि गुरुप्रभावं ग्रन्थरत्नं प्रणिनाय। सङ्ग्रहेऽस्मिन्ननेकाः सर्वा वा कथास्तस्य मौलिक्यो रचना नासन्, परं पुरातनीनां कथानामनुवादा एवासन्। तथापि व्यासमहाभागस्य सरलया सत्याऽपि काव्यात्मिकया मनोहरया च भाषयाऽमरवाणीपुस्तकमिदमरत्वं प्राप। वैक्रमे १९४६तमेऽब्दे पुस्तकस्यास्य सरलशब्दावल्या, पादटिप्पणीभिः, कथान्तेषु पादेनार्धेन पूर्णेनाधिकेन वाऽनुष्टुभा निबद्धाभिः

शिक्षाभिः, झोपाख्यपण्डितमहेशशर्मकृतैर्दीर्घतरच्छन्दोनिबद्धैः कथासारैश्च युतं द्वितीयसंस्करणं प्राकाश्यम् निन्ये। बहूपयोगि पुस्तकमिदं बहुवारं मया प्रत्यक्षरूपेण मम यूट्यूब-सरण्याञ्च *समारम्भ*-शृङ्खलया च च्छात्रान् संस्कृतभाषामध्यापयितुं प्रायुजि।

कथाकुसुमसौरभम् नामेदं पुस्तकं कथाकुसुमे निबद्धानां पञ्चविंशतेः कथानां नव नवान् गन्धान् प्रस्तौति। *आमोदः* ("अतिदूरगामिगन्धः") इत्याख्यगन्ध एकैकस्याः कथायाः शब्दशो हिन्द्यनुवादं प्रस्तौति। *सुवासः* ("शोभनगन्धः") इत्याख्यगन्धः कथाया हिन्दीगद्यानुवादं तनोति। *गन्धसारः* ("सुगन्धस्य हार्दम्", चन्दनश्च) इत्याख्यगन्धः कयाचिद्धिन्दीसूक्त्या हिन्दीलोकोक्त्या वा कथायाः सारं विन्यस्यति। *समाकर्षी* ("दूरगामिगन्धः") इत्याख्यगन्धः कथायाः शब्दश आङ्ग्ल्यनुवादं प्रस्तौति। *निर्हारी* (एषोऽपि "दूरगामिगन्धः") इत्याख्यगन्धः कथाया आङ्ग्ली-गद्यानुवादं विस्तारयति। *महक्कः* (एषोऽपि "दूरगामिगन्धः") इत्याख्यगन्धः कयाचिदाङ्ग्ली-सूक्त्याऽऽङ्ग्लीलोकोक्त्या वा कथायाः सारं प्रदर्शयति। *परिमलः* ("जनमनोहरगन्धः") इत्याख्यगन्धः कथायाः संस्कृतटीकां प्रसारयति। प्राचीनसंस्कृतटीकानां परिपाटीमनुसरन्ती कोशव्याकरणशास्त्रोद्धरणसम्पन्नेयं टीका कथानां युक्ततमानुवादभूता। प्रौढसंस्कृतग्रन्थानां टीकानामध्ययनाय छात्राणां सज्जीकरणमेवास्याष्टीकायाः प्रयोजनम्। *अधिवासः* ("अधिको वासः=गन्धः", धूपनादिभिः संस्कारश्च) कथायाः सारं केनचित्संस्कृतसुभाषितेन वक्ति। *घ्राणतर्पणः* ("इष्टगन्धः") इत्याख्यगन्धे झोपाख्यपण्डितमहेशकृतानि कथासारयुतानि पद्यानि सन्ति। एतैर्नवभिर्गन्धैः सह प्रत्येकस्मिन्नध्याये *गन्धसंस्कारः* ("सुगन्धाभ्यासः") इत्याख्यभागो वर्तते यः पाठकान् कथाया अन्यतमयोः शब्दधात्वोः सुबन्ततिङन्तरूपाणि शिक्षयति। अन्ततः *घ्राणपरीक्षा* ("शिङ्घनपरीक्षणम्") इत्याख्यभागे पाठकानां प्रश्नैः परीक्षा। परीक्षायां प्रश्नानुत्तरयितुं पाठकाः परिमलटीकामध्येतुमर्हन्ति।

हिन्द्याऽङ्ग्ल्या वा संस्कृतभाषां शिक्षमाणाः पाठका आदौ मूलसंस्कृतकथां पठित्वा तदनन्तरं हिन्द्यामाङ्ग्ल्यां वा शब्दशोऽनुवादमधीत्य ततो हिन्द्यामाङ्ग्ल्यां वा गद्यानुवादमवगम्य ततः संस्कृतटीकां पठितुमर्हन्ति। यद्यपि प्रारम्भिकसंस्कृतच्छात्राः सम्पूर्णां टीकामवगन्तुं न शक्ष्यन्त्येतत्सम्भाव्यते, तथाऽपि यथासामर्थ्यं टीकाध्ययनं तेभ्यो हितम्। ये च पाठकाः पूर्वाधीतसंस्कृताः स्युः, ते हिन्द्यनुवादमाङ्ग्ल्यनुवादञ्च विहाय सद्यः संस्कृतटीकामेव पठेयुः।

अहमस्य पुस्तकस्य प्रकाशनाय चौखम्भाक्लासिकाप्रकाशनस्य स्वामिनः वैश्यवंशावतंसस्य श्रेयोगुप्तमहोदस्य कृतज्ञोऽस्मि। भारतवर्षस्य प्राचीनतमेषु प्रशस्ततमेषु प्रकाशनसंस्थानेष्वन्यतमेन चौखम्भाप्रकाशनेन संयुज्याहं प्रकामं मोमुद्ये। अस्य ग्रन्थस्य परिमलटीकायाः प्राग्रूपं पाणिनीय-व्याकरणनिष्णातेन राजपुत्रोपाख्येन श्रीमतोज्ज्वलेन पर्यस्कारि। अस्मै सारस्वतोपकारायाहं तस्याधमर्णोऽस्मि। ऋण्यस्म्यहं बालविदुष्या बहुमुखप्रतिभासम्पन्नाया जयत्यागीत्युपाख्याया आयुष्मत्या दीक्षाया यया पुस्तकायास्मै पञ्चविंशतिश्चित्राण्यचित्रयिषत। अत्र्युपाख्यया विदुष्या

पुरोवाक्

शिवान्या पुस्तकस्यास्यावरणचित्रं निरमायि। तदर्थमहं तयाऽप्युपकृतोऽस्मि। अहं मम पुत्रौ पितरौ च हृदा धन्यवादान् व्याहरामि। एतेषां प्रेम्णा समर्थनेन चैव मम लेखनं संभवति। अन्ततोऽस्य पुस्तकस्य लेखने प्रत्यक्षं परोक्षं वा साहाय्यं कुर्वाणेभ्यः सर्वेभ्यो महानुभावेभ्योऽहं कार्तज्ञ्येन नमस्करोमि।

पुस्तकमिदं भवतां सर्वेषां संस्कृताध्ययनसाधनायाः प्रथमक्रम उपयोगि भवत्वित्याशास्ते

मिश्रोपाख्यो नित्यानन्दः
योगिन्येकादशी, २०७९तमे वैक्रमेऽब्दे (अधिमुम्बापुरि)



कथा ११

मेषवृकौ

कुसुमम्

कोऽपि वृकः कस्मिंश्चित् निर्झरे जलं पातुं गतो दृष्टवान् यत् निम्नभागे एको मेषोऽपि जलं पिबतीति। ततस्तेन विचारितं यत् कथमपि एष हन्तव्यः। परन्तु यावदहमेतस्य समीपं यास्यामि तावदेष पलायिष्यते, अतो धूर्ततां करिष्यामि। एवं निश्चित्य किञ्चित् किञ्चित् चलन् उवाच, "अरे मूर्ख! अहं जलं पिबामि तत्त्वं कथं मलिनयसि? तेनोक्तम्, "महामान्य। क्षम्यताम्। मदुच्छिष्टं जलं ततो न प्रवहति किन्तु भवदुच्छिष्टमेव इतः प्रवहति।" वृकेणोक्तं, "किं रे मया सह वादं करोषि?" तेनोक्तम्, "क्षम्यतां क्षम्यतां प्रभो।" अथ स पुनरुवाच, "भद्रम्। क्षान्तोऽयमपराधः। किन्तु वर्षं व्यतीतं तदा त्वया 'रे रे वृक' इति कथमिवोक्तम्?" स आह, "प्रभो। तदा तु मम जन्मापि नासीत्।" अथ वृकः, "अस्तु। त्वं नासीः। तदेष तव पिताऽसीत्। शत्रुपुत्रोऽपि च शत्रुरेव भवति," इति कथयित्वा तं जग्राह।

कञ्चिद्दोषं कल्पयित्वा घ्नन्ति दीनान् जनाः खलाः।

आमोदः

कोऽपि किसी ने। **वृकः** भेड़िए ने। **कस्मिंश्चित्** किसी में। **निर्झरे** झरने में। **जलम्** पानी को। **पातुम्** पीने के लिए। **गतः** गया हुआ। **दृष्टवान्** देखा। **यत्** कि, जो। **निम्नभागे** नीचे के भाग में। **एकः** एक। **मेषः** भेड़, मेढ़ा। **अपि** भी। **जलम्** पानी को। **पिबति** पी रहा है। **इति** ऐसा। **ततः** फिर। **तेन** उसके द्वारा। **विचारितम्** सोचा गया। **यत्** कि, जो। **कथमपि** कैसे भी (**कथम्** कैसे? + **अपि**)। **एषः** यह। **हन्तव्यः** मारने योग्य है। **परन्तु** किन्तु। **यावत्** जब, जब तक। **अहम्** मैं। **एतस्य** इसके। **समीपम्** पास। **यास्यामि** जाऊँगा। **तावत्** तब, तब तक। **एषः** यह। **पलायिष्यते** भाग जाएगा। **अतः** इसलिए। **धूर्तताम्** छल को, ठगपने को। **करिष्यामि** करूँगा। **एवम्** ऐसा। **निश्चित्य** निश्चय करके। **किञ्चित् किञ्चित्** थोड़ा-थोड़ा। **चलन्** चलते हुए। **उवाच** बोला। **अरे** हे। **मूर्ख** मूर्ख। **अहम्** मैं। **जलम्** पानी को। **पिबामि** पी रहा हूँ। **तत्** तो। **त्वम्** तुम। **कथम्** कैसे। **मलिनयसि** मैला कर रहे हो। **तेन** उसके द्वारा। **उक्तम्** कहा गया। **महामान्य**

हे महा माननीय। **क्षम्यताम्** छमा किया जाए। **मदुच्छिष्टम्** मेरा जूठा। **जलम्** पानी। **ततः** वहाँ। **न** नहीं। **प्रवहति** बह रहा है। **किन्तु** परन्तु। **भवदुच्छिष्टम्** आपका जूठा। **एव** ही। **इतः** यहाँ, इस ओर। **प्रवहति** बह रहा है। **वृकेण** भेड़िए के द्वारा। **उक्तम्** कहा गया। **किं रे** क्यों रे। **मया सह** मेरे साथ। **वादम्** वाद को, झगड़े को, बहस को। **करोषि** करते हो। **तेन** उसके द्वारा। **उक्तम्** कहा गया। **क्षम्यतां क्षम्यताम्** छमा किया जाए, छमा किया जाए। **प्रभो** हे प्रभु। **अथ** तब। **सः** वह। **पुनः** फिर। **उवाच** बोला। **भद्रम्** ठीक। **क्षान्तः** छमा किया गया। **अयम्** यह। **अपराधः** अपराधः, भूल। **किन्तु** पर। **वर्षम्** एक बरस। **व्यतीतम्** बीता। **तदा** तब। **त्वया** तुम्हारे द्वारा। **रे रे वृक** अबे ओए भेड़िए। **इति** ऐसा। **कथम्** कैसे। **इव** भला। **उक्तम्** कहा गया। **सः** वह। **आह** कहता है (=बोला)। **प्रभो** हे प्रभु। **तदा** तब। **तु** तो। **मम** मेरा। **जन्म** जनम। **अपि** भी। **न** नहीं। **आसीत्** [हुआ] था। **अथ** तब। **वृकः** भेड़िया। **अस्तु** ठीक। **त्वम्** तुम। **न** नहीं। **आसीः** थे (मध्यमपुरुष एकवचन)। **तत्** तो। **एषः** यह। **तव** तुम्हारा। **पिता** बाप। **आसीत्** था। **च** और। **शत्रुपुत्रः** बैरी का बेटा। **अपि** भी। **शत्रुः** बैरी। **एव** ही। **भवति** होता है। **इति** ऐसा। **कथयित्वा** कहकर। **तम्** उसको। **जग्राह** धर दबोचा। **कञ्चित्** किसी को। **दोषम्** दोख को, बुराई को। **कल्पयित्वा** सोचकर, मानकर। **घ्नन्ति** मारते हैं, नष्ट करते हैं। **दीनान्** डरे हुओं को, अभागों को। **जनाः** लोग। **खलाः** बुरे, दुष्ट।

सुवासः

किसी झरने में पानी पीने के लिए गए हुए किसी भेड़िए ने यह देखा नीचे के भाग में एक भेड़ भी पानी पी रहा है ऐसा। फिर उसने यह सोचा, "इसे कैसे भी मारना चाहिए। पर जब तक मैं इसके पास जाऊँगा, तब तक यह भाग लेगा। इसलिए छल करूँगा।" ऐसा निश्चय करके थोड़ा-थोड़ा चलते हुए वह बोला, "मूर्ख! मैं पानी पी रहा हूँ तो तुम कैसे उसे मैला कर रहे हो?" उसने कहा, "महा माननीय! छमा किया जाए। मेरा जूठा पानी वहाँ नहीं बह रहा है परन्तु आपका जूठा ही यहाँ बह रहा है।" भेड़िए ने कहा, "क्यों रे! मेरे साथ वाद करता है?" उसने कहा, "छमा किया जाए, छमा किया जाए, हे प्रभु!" तब वह फिर बोला, "ठीक है। यह भूल छमा की। पर एक बरस पहले तुमने 'अबे ओए भेड़िए' ऐसा कैसे कहा था भला?" वह बोला, "हे प्रभु! तब तो मेरा जनम भी नहीं हुआ था।" तब भेड़िए ने, "ठीक है। तुम नहीं थे तो यह तुम्हारा बाप था। और बैरी का बेटा भी बैरी ही होता है," ऐसा कहकर उसको धर दबोचा।

बुरे लोग कोई बुराई सोचकर अभागों को मार डालते हैं।

गन्धसारः

शठ सन विनय कुटिल सन प्रीती।
सहज कृपन सन सुंदर नीती॥ ...
क्रोधिहिं शम कामिहिं हरि कथा।
ऊसर बीज बए फल जथा॥

"दुष्ट के साथ विनय, कुटिल के साथ प्रेम, सहज कृपण के साथ नीति, क्रोधी के सामने शान्ति और कामी के सामने हरिकथा का फल वैसे ही है जैसे ऊसर में बीज बोने का फल।" (रा॰च॰मा॰ ५.५८.२,४)।

समाकर्षी

कोऽपि a certain, one, some. **वृकः** a wolf. **कस्मिंश्चित्** in a certain, in some. **निर्झरे** in a waterfall. **जलम्** to water. **पातुम्** for drinking. **गतः** gone. **दृष्टवान्** saw. **यत्** that. **निम्नभागे** in the lower part. **एकः** one. **मेषः** sheep. **अपि** also. **जलम्** to water. **पिबति** is drinking. **इति** thus. **ततः** then. **तेन** by him. **विचारितम्** it was thought. **यत्** that. **कथमपि** by whatever means (**कथम्** how? + **अपि**). **एषः** this one. **हन्तव्यः** should be killed. **परन्तु** but. **यावत्** till, when. **अहम्** I. **एतस्य** of this one, his. **समीपम्** near. **यास्यामि** shall go. **तावत्** by then, then. **एषः** he. **पलायिष्यते** will flee. **अतः** hence. **धूर्तताम्** to cheating. **करिष्यामि** I will do (=I will resort). **एवम्** thus. **निश्चित्य** having ascertained. **किञ्चित् किञ्चित्** little by little. **चलन्** moving. **उवाच** said. **अरे** Hey! **मूर्ख** You fool! **अहम्** I. **जलम्** to water. **पिबामि** am drinking. **तत्** then, that. **त्वम्** you. **कथम्** how, how dare. **मलिनयसि** are dirtying, are defiling. **तेन** by him. **उक्तम्** it was said. **महामान्य** O highly respectable one! **क्षम्यताम्** may I/it be forgiven. **मदुच्छिष्टम्** defiled by me. **जलम्** water. **ततः** there. **न** not. **प्रवहति** is flowing. **किन्तु** but. **भवदुच्छिष्टम्** [that] drunk/defiled by your honour. **एव** alone. **इतः** this way, here. **प्रवहति** is flowing. **वृकेण** by the wolf. **उक्तम्** it was said. **किं रे** What, eh? **मया सह** with me. **वादम्** to argument. **करोषि** you do, you undertake. **तेन** by him. **उक्तम्** it was said. **क्षम्यतां क्षम्यताम्** May I/it be forgiven (repetition for emhpasis). **प्रभो** O master! **अथ** then. **सः** he. **पुनः** again. **उवाच** spoke. **भद्रम्** All right! **क्षान्तः** forgiven. **अयम्** this. **अपराधः** fault, transgression. **किन्तु** but. **वर्षम्** one year. **व्यतीतम्** passed. **तदा** then. **त्वया** by you. **रे रे वृक** Hey, you! Wolf! **इति** thus. **कथम्** how. **इव** possibly. **उक्तम्** was said. **सः** he. **आह** says (=said). **प्रभो** O master! **तदा** then. **तु** indeed. **मम** my.

जन्म birth. **अपि** also. **न** not. **आसीत्** was. **अथ** then. **वृकः** the wolf. **अस्तु** All right! **त्वम्** you. **न** not. **आसीः** were. **तत्** then. **एषः** this one, he. **तव** your. **पिता** father. **आसीत्** was. **च** and. **शत्रुपुत्रः** the son of an enemy. **अपि** also. **शत्रुः** an enemy. **एव** alone. **भवति** is, happens to be. **इति** thus. **कथयित्वा** having said. **तम्** him. **जग्राह** grabbed. **कञ्चित्** to some. **दोषम्** to a fault. **कल्पयित्वा** having assumed. **घ्नन्ति** harm, kill, destroy. **दीनान्** to the hapless ones, to the terrified ones. **जनाः** the evil. **खलाः** people.

निर्हारी

A wolf, who had gone to a waterfall to drink water, saw that a sheep was also drinking water downstream. Then he thought thus, "He should be killed in some way. But no sooner will I go near him than he will escape. Therefore, I will cheat." Having ascertained thus, he spoke, moving little by little, "Hey fool! When I am drinking water, then how dare you dirty it?" The sheep said, "Highly respectable sir! Please forgive me! Water spat out by me is not flowing that way, rather water spat out by your honour is flowing this way." The wolf said, "What? Are you arguing with me?" The sheep replied, "Master! Please forgive me." Then the wolf spoke again, "All right! This fault is forgiven. But then, a year ago, how come you uttered 'Hey, you! Wolf!' to me?" He said, "Master! Then I was not even born." Then, after saying, "All right. If you were not there, then it was your father. Even the son of an enemy is just an enemy," the wolf grabbed him.

Making up some fault, evil people harm the poor ones.

महक्कः

"The wicked wait in ambush for the godly, looking for an excuse to kill them" (Psalm 37.32, New Living Translation).

परिमलः

कोऽपि कश्चन। **वृकः** कोकः। *कोकस्त्वीहामृगो वृकः* इत्यमरः। **कस्मिंश्चित्** कस्मिंश्चन। **निर्झरे** वारिप्रवाहे। *वारिप्रवाहो निर्झरो झरः* इत्यमरः। **जलम्** सलिलम्। *आपः स्त्री भूम्नि वार्वारि सलिलं कमलं जलम्* इत्यमरः। **पातुम्** पेतुम्, धातुम्। **गतः** यातः, प्राप्तः। **दृष्टवान्** ईक्षितवान्,

अवलोकितवान्। **यत्** दृश्यवर्णनारम्भे। निम्नश्चासौ भागश्चेति निम्नभागस्तस्मिन्। **निम्नभागे** निर्झराधरांशे, अनुस्रोतः। *अंशभागौ तु वण्टके* इत्यमरः। **एकः** प्रथमसंख्यान्वितः। **मेषः** भेड एडको वा। *मेढ्रोरभ्रोरणोर्णायुमेषवृष्णय एडके* इत्यमरः। **अपि** समुच्चये। **जलम्** सलिलम्। **पिबति** पीयते। **इति** दृश्यवर्णनसमापने। **ततः** आनन्तर्ये (=ततः पश्चात्)। **तेन** वृकेण। **विचारितम्** चिन्तितम्। **यत्** विचारारम्भे। **कथमपि** केनापि प्रकारेण। *किमश्च* इति थमुः, *किमः कः* इति कादेशः। **एषः** समीपतरवर्ती मेषः। **हन्तव्यः** मारयितव्यः, व्यापादयितव्यः, घात्यः, वध्यः। **परन्तु** किन्तु। **यावत्** यस्मिन् कालावधौ। *यावत्तावच्च साकल्येऽवधौ मानेऽवधारणे* इत्यमरः। **अहम्** अस्मदर्थे (स्वगतोक्तेः कर्तरि)। **एतस्य** बुद्धिस्थस्य (=समीपतरवर्तिनो मेषस्य)। **समीपम्** निकटे। *समीपे निकटासन्नसन्निकृष्टसनीडवत्* इत्यमरः। **यास्यामि** गमिष्यामि। **तावत्** तस्मिन् कालावधौ। **एषः** मेषः। **पलायिष्यते** अपधाविष्यति, दूरं द्रोष्यति। *उपसर्गस्यायतौ* इति लत्वम्। **अतः** अतो हेतोः। **धूर्तताम्** वञ्चनम्, धौर्त्यम्। **करिष्यामि** विधास्यामि, समाचरिष्यामि। **एवम्** इत्थम्। *इवेत्थमर्थयोरेवम्* इत्यमरः। **निश्चित्य** निर्णीय। *समौ निर्णयनिश्चयौ* इत्यमरः। **किञ्चित् किञ्चित्** ईषदीषत्, किमपि किमपि। *नित्यवीप्सयोः* इति द्वित्वम्। *किञ्चिदीषन्मनागल्पे* इत्यमरः। **चलन्** क्राम्यन्। **उवाच** जगाद। **अरे** नीचसम्बोधने (=रे)। **मूर्ख** मूढ। *अज्ञे मूढयथाजातमूर्खवैधेयबालिशाः* इत्यमरः। **अहम्** उच्चारयितरि ("अयं जनः")। **जलम्** सलिलम्। **पिबामि** पीये। **तत्** तर्हि तज्जलं वा। **त्वम्** भवान्। **कथम्** केन प्रकारेण। **मलिनयसि** मलिनं करोषि। *तत्करोति तदाचष्टे* इति णिच्। **तेन** मेषेण। **उक्तम्** भाषितम्। महांश्चासौ मान्यश्च महामान्यस्तत्सम्बुद्धौ **महामान्य** हे अतिशयपूज्य। **क्षम्यताम्** मृष्यताम्। **मदुच्छिष्टम्** मत्पीतावशिष्टम्। **जलम्** सलिलम्। **ततः** तत्र। *तसिप्रकरण आद्यादिभ्य उपसंख्यानम्* इत्येन सप्तम्यर्थे सार्वविभक्तिकस्तसिः। **न** नो। **प्रवहति** प्रसरति। **किन्तु** परन्तु। **भवदुच्छिष्टम्** भवत्पीतावशिष्टम्। **एव** अवधारणे। **इतः** अत्र। पूर्ववत्सप्तम्यर्थे सार्वविभक्तिकस्तसिः। *इदम इश्* इत्यनेनेकारादेशः। **प्रवहति** प्रसरति। **वृकेण** कोकेन। **उक्तम्** अभिहितम्। **किं रे** किं भोः। **मया** अनेन जनेन। *सहयुक्तेऽप्रधाने* इति सहयोगे तृतीया। **सह** साकम्। *सार्धं तु साकं सत्रा समं सह* इत्यमरः। उद्यतेऽनेनेति वादस्तं **वादम्** पक्षप्रतिपक्षपरिग्रहम्। *हलश्च* इति घञ्। *तत्त्वबुभुत्सोः कथा वादः* इति तर्कसंग्रहः। **करोषि** विदधासि, समाचरसि। **तेन** मेषेण। **उक्तम्** आख्यातम्। **क्षम्यतां क्षम्यताम्** मृष्यतां मृष्यताम्। प्रभवतीति प्रभुस्तत्सम्बुद्धौ **प्रभो** हे स्वामिन्। *विप्रसम्भ्यो ड्वसंज्ञायाम्* इति डुः। *स्वामी त्वीश्वरः पतिरीशिता, अधिभूर्नायको नेता प्रभुः परिवृढोऽधिपः* इत्यमरः। **अथ** आनन्तर्ये। *मङ्गलानन्तरारम्भप्रश्नकार्त्स्न्येष्वथो अथ* इत्यमरः। **सः** वृकः। **पुनः** अप्रथमम्, भूयः। **उवाच** उवाद। **भद्रम्** बाढम्। **क्षान्तः** सोढः। *सोढे क्षान्तम्* इत्यमरः। **अयम्** सन्निकृष्टस्थः (=सद्यःकृतः)। *इदोऽय् पुंसि* इत्ययादेशः। **अपराधः** मन्तुः। *आगोऽपराधो मन्तुश्च* इत्यमरः। **किन्तु** परन्तु। **वर्षम्** वत्सरः। *वत्सरे वर्षमस्त्रियाम्* इत्यमरः। **व्यतीतम्** विगतम्। **तदा** तस्मिन् काले। *सर्वैकान्यकिंयत्तदः काले दा* इति दा। **त्वया** भवता। **रे रे** नीचस्य सम्बोधने।

वृक कोक। **इति** एवम्। **कथम्** केन प्रकारेण। **इव** अवधारणे। **उक्तम्** कथितम्। **सः** मेषः। **आह** ब्रूते (=उवाच)। *ब्रुवः पञ्चानामादित आहो ब्रुवः* इत्याहादेशः। **प्रभो** हे स्वामिन्। **तदा** तस्मिन् काले। **तु** अवधारणे। *तु स्याद्भेदेऽवधारणे* इत्यमरः। **मम** अस्य जनस्य, मे, मदीयम्, मामकम्। **जन्म** जनिः। *जनुर्जननजन्मानि जनिः* इत्यमरः। **अपि** समुच्चये। **न** निषेधे। **आसीत्** अभवत्। *अस्तिसिचोऽपृक्ते* इतीट्। **अथ** अनन्तरम्। **वृकः** कोकः। **अस्तु** भवतु। **त्वम्** भवान्। **न** निषेधे। **आसीः** अवर्तथाः। **तत्** तर्हि। **एषः** नीचसम्बोधनापराधी। **तव** त्वदीयः, ते। **पिता** जनकः। *तातस्तु जनकः पिता* इत्यमरः। **आसीत्** अवर्तत। शत्रोः पुत्रः। **शत्रुपुत्रः** रिपुसुतः। *रिपौ वैरिसपत्नारिद्विषद्द्वेषणदुर्हृदः, द्विड्विपक्षाहितामित्रदस्युशात्रवशत्रवः* इति, *आत्मजस्तनयः सूनुः सुतः पुत्रः* इति चामरः। **अपि च** समुच्चये। **शत्रुः** रिपुः। **एव** अवधारणे। **भवति** वर्तते। **इति** उक्तिसमापने। **कथयित्वा** उक्त्वा। **तम्** मेषम्। **जग्राह** दधार, जग्रसे। **किञ्चित्** किमपि ईषत् वा। *किञ्चिदीषन्मनागल्पे* इत्यमरः। **दोषम्** दूषणम् (=अपकर्षप्रयोजकधर्मभेदम्)। **कल्पयित्वा** उपन्यस्य, रचयित्वा, आरोप्य। **घ्नन्ति** मारयन्ति, नाशयन्ति। *गमहनजनखनघसां लोपः क्ङित्यनङि* इत्युपधालोपः, *हो हन्तेर्ञ्णिन्नेषु* इति कुत्वम्। **दीनान्** दुःखितान्। **जनाः** मनुष्याः। **खलाः** दुर्जनाः। *पिशुनो दुर्जनः खलः* इत्यमरः।

अधिवासः

सर्पः क्रूरः खलः क्रूरः सर्पात्क्रूरतरः खलः।
मन्त्रेण शाम्यते सर्पो न खलः शाम्यते कदा॥

इति सुभाषितरत्नभाण्डागारे।

घ्राणतर्पणः

मेषं कोऽपि झरे पिबन्तमवदद्वारि च्युतं ते मुखा-
दायातीति वृको न चैवमुरणोऽधोऽस्मीति वर्षात्पुरा।
मा वोचो वृक रे न मे जनिरभूत्तातस्तवोक्त्वाऽग्रहीत्
कञ्चिद्दोषमसन्तमप्यथ वदन्दीनं खलो बाधते॥

छन्दः—शार्दूलविक्रीडितम्। लक्षणं प्रागुक्तम्।

गन्धसंस्कारः

युष्मत् (त्रि॰) = संबोध्यचेतने, तुम, you। अस्य त्रिषु लिङ्गेषु समानि रूपाणि—

विभक्तिः	**एकवचनम्**	**द्विवचनम्**	**बहुवचनम्**
प्रथमा	**त्वम्**	युवाम्	यूयम्
द्वितीया	त्वाम्/त्वा	युवाम्/वाम्	युष्मान्/वः
तृतीया	**त्वया**	युवाभ्याम्	युष्माभिः
चतुर्थी	तुभ्यम्/ते	युवाभ्याम्/वाम्	युष्मभ्यम्/वः
पञ्चमी	त्वत्	युवाभ्याम्	युष्मत्
षष्ठी	तव/ते	युवयोः/वाम्	युष्माकम्/वः
सप्तमी	त्वयि	युवयोः	युष्मासु

उदाहरणे—**त्वं** जलं कथं मलिनयसि? **त्वया** 'रे रे वृक' इति कथमिवोक्तम्?

√**हन्** = हिंसागत्योः, मारना, to injure/kill। अस्य कर्तरि 'लट्'लकारे रूपाणि—

पुरुषः	**एकवचनम्**	**द्विवचनम्**	**बहुवचनम्**
प्रथमपुरुषः	हन्ति	हतः	**घ्नन्ति**
मध्यमपुरुषः	हंसि	हथः	हथ
उत्तमपुरुषः	हन्मि	हन्वः	हन्मः

उदाहरणम्—खला जना दीनान् **घ्नन्ति**।

घ्राणपरीक्षा

१. परिमलटीकायाः पर्यायपदानि लिखत—

मेषः = ________________

जलम् = ________________

करिष्यामि= ________________

अपराधः = ________________

शत्रुः = ________________

पुत्रः = ________________

खलः = ________________

२. सन्धिविच्छेदं कुरुत—

कस्मिंश्चिन्निर्झरे = ________________

यावदहमेतस्य = ________________

भवदुच्छिष्टमेवेतः = ________________

क्षान्तोऽयमपराधः = ________________

३. समासविग्रहं कुरुत—

महामान्यः = ________________

शत्रुपुत्रः = ________________

४. रिक्तस्थानानि पूरयत—

________________ सह वादं करोषि? (अस्मत्, ए॰व॰)

ततः ________________ विचारितम्। (तत्, पुं॰, ए॰व॰)

५. प्रश्नान् उत्तरयत—

वृकः जलं पातुं कुत्र गतः?

मेषं दृष्ट्वा तेन किं विचारितम्?

स कथं चलन्नुवाच?

स किं कृत्वा मेषं जग्राह?

खला जनाः कान् घ्नन्ति? कथं च?